उपर्युक्त पूंजीपति प्रथा के विकल्प के रूप में 1917 में रूस में साम्यवादी क्रांति हुई थी। उस क्रांति ने श्रमिकों की तानाशाही प्रस्थापित करने का लक्ष्य बनाया था। कुछ सालों तक उसका विश्वभर में बोलबाला होता रहा। उसने वर्ग-संघर्ष के नाम पर मानव-मानव में शत्रुता को जन्म दिया। मानव जाति के सह-अस्तित्व के मूल सिद्धांत के प्रतिकूल कोई व्यवस्था अधिक समय तक टिक नहीं सकती, यह भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का अनुभवसिद्ध निष्कर्ष है। अत: इने-गिने सालों में ही यह साम्यवादी विकल्प बेकार सिद्ध हुआ है।

स्वतंत्र भारत में उपर्युक्त दोनों मानवीयता रहित व्यवस्थाओं को मिलाकर मिश्रित अर्थव्यवस्था का प्रयोग किया गया। उससे राहत मिलने वाली नहीं थी। अब उदारवादी अर्थव्यवस्था का आलाप छेड़ा गया है। वह समाज में विषमता की खाई और अधिक चौड़ी कर रहा है, जो सह-अस्तित्व के सिद्धांत के विपरीत है। अत: इसकी विफलता भी अटल है।

जो व्यवस्था समाज में सह-अस्तित्व के अनुकूल नहीं होगी, वह असंख्य समस्याओं की जननी बनेगी। जो देश आज आर्थिक समृद्धि के शिखर पर आरूढ़ दिखाई दे रहे हैं, वे इस तथ्य को नजरअंदाज कर रहे हैं।

सौभाग्य से, भारत के युवाओं को अपने देश के साथ-साथ अविकसित एवं विकासमान देशों के लिये प्रगति का दोषमुक्त नमूना प्रस्तुत करने का सुअवसर उपलब्ध है। ग्रामीण अंचल किसी भी देश के समुचित उन्नति का मूलभूत स्रोत है। उसी को प्रगति की सुदृढ़ नींव मानकर स्वाभिमानपूर्ण व स्वावलंबी जीवन खड़ा किया जा सकता है। वर्तमान काल में उसका अनुकरणीय नमूना विश्व में कहीं भी उपलब्ध नहीं है, न उस ओर किसी का ध्यान ही है।

भारत का युवा-वर्ग इस अभाव को दूर कर केवल अपना ही जीवन सार्थक नहीं बनाएगा, अपितु मानव-मात्र के लिए प्रगति का आदर्श मार्ग प्रशस्त करेगा।

शुभाकांक्षी -

नाना देशमुख

(नाना देशमुख)

दिनांक : 28 जुलाई, 2005

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

गुलामी के पूर्व हमारी न्याय व्यवस्था बहुत सरल, तत्काल निर्णायक एवं संतोषप्रद हुआ करती थी। वह ''पंचमुखी परमेश्वर'' के नाम से जानी जाती थी। फलस्वरूप, ग्रामीण जीवन सद्भावनापूर्ण, सहयोगात्मक और सामंजस्यपूर्ण था।

मुस्लिम हुकूमतों के काल में शासकों ने शहरों एवं कस्बों में न्याय-व्यवस्था में कुछ परिवर्तन अवश्य किए थे। किन्तु ग्रामीण न्याय-व्यवस्था पूर्ववत् चलती रही।

सन् 1765 के बक्सर युद्ध में प्राप्त विजय के बाद अंग्रेजों ने अपनी शासन प्रणाली लागू करना प्रारंभ किया। राजस्व वसूली तथा न्याय-व्यवस्था पर अपना शिकंजा जमाना शुरू किया। बंगाल, बिहार और उड़ीसा को मिलाकर विशाल भू-भाग को जिलों की इकाईयों में बांटा गया। हर जिले के लिए अंग्रेज कलेक्टर नियुक्त किए गए। वे राजस्व वसूली के साथ जिला मजिस्ट्रेट का भी काम करने लगे। आगे चलकर दीवानी और फौजदारी अदालतों की जिला स्तर पर स्थापनाएं हुई। सभी कचहरियों में अंग्रेजी भाषा प्रचलित की गई। वकीलों की आवश्यकता जरूरी हुई। 1828 से लार्ड विलियम बेंटिंग के जमाने से वकीलों का व्यवसाय नियमित रूप से चल पड़ा। वही सिलसिला अबाधित गति से आज भी चल रहा है। अंग्रेजी भाषा का प्रभुत्व स्वतंत्र भारत में भी बना हुआ है।

सुदैव से मेरा जन्म छोटे से ग्राम में हुआ और मेरा जीवन-कार्य भी ग्रामीण अंचल ही बना हुआ है। फलस्वरूप, मेरा जिला कचहरियों में जाना-आना होता रहा है।

जिला कचहरियों में 95 प्रतिशत से भी अधिक भीड़ ग्रामवासियों की ही रहती है। वे अपना-अपना मुकदमा लेकर वकीलों को घेरे रहते हैं।

वकील वर्ग सुशिक्षित, कानूनों का जानकार, वाद-विवाद में पटु तथा नेतृत्व में अग्रणी है। महात्मा गांधी, मोतीलाल नेहरू, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद आदि अनेक वकीलों ने स्वातंत्र्य संग्राम का नेतृत्व किया था। आजादी पाने के बाद भी यह वर्ग राजनीति में प्रमुखता प्राप्त किए हुए है।

ग्रामवासी आपस में मुकदमेबाजी के द्वारा स्वयं को बर्बाद कर रहे हैं, यह देखते हुए भी वकील वर्ग उन्हें समझाता नहीं कि वे इस मुकदमेबाजी की बर्बादी से स्वयं को बचा लें। अपितु उनकी मुकदमेबाजी में ही वह अधिक रूचि रखता है। कारण, वही उसने आजीविका का साधन बना रखा है। ग्रामीणों की दयनीय दशा जानते हुए भी वह उनसे अधिक मेहनताना वसूलने में लगा रहता है। ग्रामवासी कर्जदार होते हुए भी हजारों वकीलों के सुखमय जीवन का बोझ ढोते आ रहे हैं। यह वकील वर्ग 1828 से गरीब ग्रामीण आबादी का सतत् शोषण करता आ रहा है। इस गंभीर समस्या की ओर हमारे नेतृत्व ने अपनी आँखें मूंद रखी हैं। यदि यही स्थिति बनी रही तो सरकारों द्वारा बनाई गई ग्रामविकास की योजनाएं क्या कभी देश की सत्तर प्रतिशत से अधिक ग्रामीण आबादी को खुशहाल बना पाएंगी?